नेमिनाथ (अरिष्टनेमि)

– सुरेंद्र बोथरा

सभी जैन तीर्थंकरों के जीवनवृत्त अहिंसा की भावना और अहिंसक आचरण से ओत–प्रोत हैं; किंतु, सहज करुणा की भावना के उद्वेलन से तत्काल जिसके जीवन में दिशा परिवर्तन हुआ, वह विशिष्ट नाम है अरिष्टनेमि, जो जैन परंपरा के बाईसवें तीर्थंकर भगवान नेमिनाथ के नाम से अधिक जाने जाते हैं।

अरिष्टनेमि उन तीन जैन तीर्थंकरों में हैं, जिनका उल्लेख प्राचीन जैनेतर ग्रंथों में अहिंसा मार्ग के प्रतिपादक के रूप में मिलता है। अरिष्टनेमि का उल्लेख ऋग्वेद में चार स्थानों पर मिलता है। प्रसिद्ध बौद्ध विद्वान धर्मानंद कौसांबी छांदोग्य उपनिषद के घोर आंगिरस ऋषि को अरिष्टनेमि मानते हैं। डॉ० राधाकृष्णन के अनुसार ऋषभ, अजित और अरिष्टनेमि का उल्लेख यजुर्वेद में तीर्थंकर के रूप में हुआ है। महाभारत के शांति पर्व में अरिष्टनेमि द्वारा राजा सगर को मोक्षमार्ग के उपदेश का उल्लेख है।

जैन पौराणिक कथाओं के अनुसार इस विभूति का जन्म हरिवंश में हुआ था। प्राचीन काल में यमुना नदी के तट पर शौर्यपुर (सौरिपुर) नामक राज्य था। इसके संस्थापक महाराज सौरी के दो पुत्र थे –– अंधक वृष्णि और भोगवृष्णि। अंधक वृष्णि के समुद्रविजय, अशोक, स्तमित, सागर, हिमवान, अचल, धरण, पूरण, अभिचंद और वसुदेव ये दस पुत्र थे, जो दशार्ह नाम से प्रसिद्ध हुए। समुद्रविजय और वसुदेव विशेष प्रभावशाली व प्रसिद्ध हुए। समुद्रविजय के चार पुत्र थे –– अरिष्टनेमि, रथनेमि, सत्यनेमि, एवं दृढ़नेमि। वसुदेव के मुख्य दो पुत्र थे –– कृष्ण व बलराम। इस प्रकार अरिष्टनेमि और श्री कृष्ण चचेरे भाई थे।

अरिष्टनेमि युवा हुए तो उनके समक्ष विवाह का प्रस्ताव रखा गया। अनेक बार आग्रह करने पर भी विरक्त स्वभावी अरिष्टनेमि ने अपनी स्वीकृति नहीं दी। तब श्रीकृष्ण ने अपनी समस्त रानियों को कहा कि किसी भी प्रकार अरिष्टनेमि को विवाह के लिए सहमत कराओ। रुक्मिणी, सत्यभामा आदि रानियों ने चतुराई से अरिष्टनेमि को मना लिया और उग्रसेन की कन्या राजीमती से विवाह तय हो गया। बिना किसी विलंब के विवाह का मुहूर्त निकालकर समस्त तैयारी की गई। नियत तिथि को पूर्ण वैभव से बारात निकली। दूल्हे अरिष्टनेमि को श्रीकृष्ण के सर्वश्रेष्ठ गंधहस्ती पर बैठाया गया।

उधर उग्रसेन ने अतिथियों के स्वागत के लिए विभिन्न प्रकार के पकवान तो बनवाए ही थे, साथ ही सैंकड़ों पशुओं को भी एकत्र कर एक बाड़े में बंद किया था। जब बारात उस बाड़े के निकट पहुंची तब कुमार अरिष्टनेमि के कानों में भयाक्रांत मूक पशुओं के क्रंदन का स्वर पड़ा। इस करुण स्वर से दयालु कुमार का हृदय द्रवित हो गया। उन्होंने महावत से इस विषय में पूछा।

महावत ने बताया कि समीपस्थ एक बाड़े में कुछ पशुपक्षियों को बांधकर रखा है, जिनका उपयोग विवाह के अवसर पर दिए जाने वाले भोज में किया जाएगा। कुमार ने जैसे ही यह सुना, उनके मन में दुख का आवेग उठा और करुणा से उनका

हृदय भर आया। मेरे कारण इतने निरीह प्राणियों की निमर्म हत्या?नहीं, यह उचित नहीं है। मुझे इस निर्दय परंपरा को समाप्त कर संसार को करुणा और अहिंसा का मार्ग दिखाना चाहिए। कुमार अरिष्टनेमि ने अपना हाथी रुकवाया और महावत से कहा कि वह जाकर सब पशु–पक्षियों को मुक्त कर दे। निरीह प्राणियों को मुक्त करके महावत वापस लौटा तो कुमार ने अपने सभी आभूषण उतारकर उसे दे दिए और द्वारका की ओर लौट चलने को कहा।

राजा समुद्रविजय श्रीकृष्ण आदि सभी गुरुजनों ने उन्हें रोककर मनाने का अथक प्रयत्न किया, किंतु उनके हाथ असफलता ही लगी। कुमार को नहीं रुकना था तो नहीं रुके। उन्होंने कहा, जैसे पशु–पक्षी बंधन में बंधे थे वैसे ही हम सभी कर्मों के बंधन में बंधे करुणाविहीन जीवन बिताते हैं। अन्यों को कष्ट देते हैं और फलस्वरूप स्वयं कष्ट पाते हैं। मुझे इन बंधनों से मुक्त होने के लिए करुणा और अहिंसा के पथ को प्रशस्त करना है। कृपया क्षमा करें।

स्व–दीक्षा के पश्चात् भगवान अरिष्टनेमि को चौवन दिन की साधना के बाद ही केवल ज्ञान प्राप्त हो गया। इसके बाद नेमिनाथ ने दीर्घ काल तक घूम–घूमकर अहिंसा का उपदेश दिया।

एक बार श्रीकृष्ण भोग–विलास में अनुरक्त यादवों के भविष्य की चिंता लेकर उनके पास पहुंचे। नेमिनाथ ने मद्य–मांस के सेवन में लिप्त यादवों का भविष्य अंधकारमय बताया और उसे रोकने को कहा। श्रीकृष्ण को बात समझ में आ गई। उन्होंने उस समय द्वारका में जितना भी मद्य था, वह सारा वन में फिंकवा दिया और मांस–मद्य को एक प्रकार से प्रतिबंधित कर दिया। किसी राज्य शासन द्वारा अमारी का नियम लागू करने का संभवत यह प्रथम उदाहरण है और इसके प्रेरक थे भगवान् अरिष्टनेमि।